तनों के फेफड़े हैं लेंटीसेल

किशोर पंवार

पिछले वर्ष नवम्बर माह में भोपाल के मोतीलाल नेहरू महाविद्यालय में वनस्पति विज्ञान के प्राध्यापकों के लिए आयोजित एक प्रशिक्षण कार्यक्रम में जाने का मौका मिला। इसमें प्रदेश से लगभग 30 प्राध्यापकों ने भाग लिया। सप्ताह भर चले इस उन्मुखीकरण कार्यक्रम में उस कॉलेज की हरियाली और वनस्पति विविधता को देखते हुए यह तय किया कि एक दिन कैम्पस का भ्रमण करेंगे। इस हेतु वहीं के एक रिटायर्ड वनस्पति विज्ञान के प्राध्यापक डॉ. शौकत खान को बुलाया गया। वे वहाँ के पेड़-पौधों की अच्छी जानकारी रखते हैं।

परिभ्रमण पर चलते-चलते मेरी नज़र

सप्तपर्णी के एक पेड़ पर पड़ी (चित्र -1)। उसके लगभग भूरे मटमेले तने पर मुझे बड़े करीने से जमे हुए हज़ारों लेंटीसेल दिखाई दिए।

मैंने देखा है कि लेंटीसेल अक्सर उन पेड़ों पर स्पष्ट दिखते हैं जिनकी छाल लगभग एक समान होती है और फ्लेक्स (पपड़ियों) के रूप में नहीं निकलती जैसे जाम (अमरूद, *Psidium guajava*, चित्र-2), और यूकेलिप्टस (सफेदा, *Eucalyptus sp.*) की निकलती है। लेंटीसेल आम (*Mangifera indica*) व नीम (*Azadirachta indica*) के पेड़ों पर नहीं देखाई देते। भिण्डी ट्री (पारस पीपल, *Thespesia populnea*) पर और इमली (*Tamarindus indica*) के छोटे पेड़ों पर ये स्पष्ट दिखाई देते हैं। परन्तु इन पेड़ों के बड़े और पुराने हो जाने पर इनकी छाल फट जाती है। उसमें बड़ी-बड़ी दरारें बन जाती हैं जो लेंटीसेल का काम करने लगती हैं।

(क)

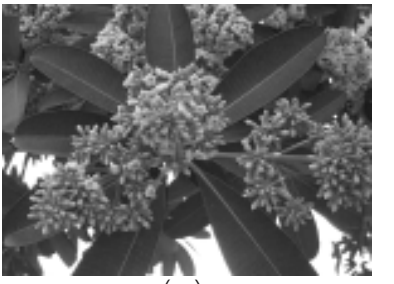

(ख)

(ग)

चित्र-1: (क) सप्तपर्णी (*Alstonia scholaris*) के तने पर लेंटीसेल;
(ख) सप्तपर्णी के फूल; (ग) सप्तपर्णी के फल।

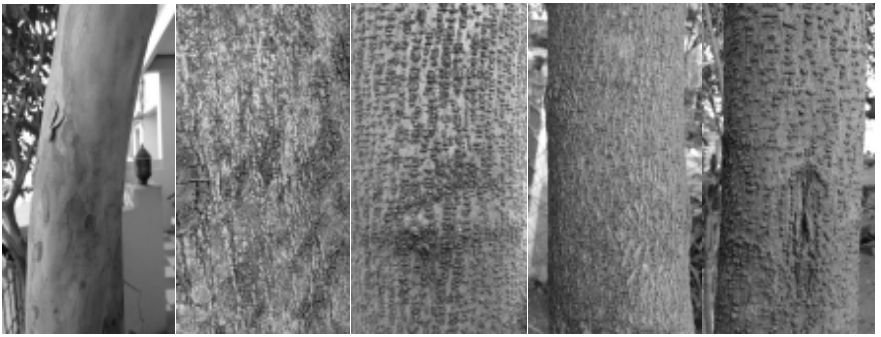

अमरूद गुलमोहर सुबबूल कचनार भिण्डी ट्री

चित्र-2: विविध पेड़ों के तनों पर लेंटीसेल। अमरूद के तने पर लेंटीसेल नहीं पाए जाते।

लेंटीसेल जड़ों पर भी होते हैं। अभी हाल ही में एक गड्ढा खोदने के दौरान बरगद और कनक चम्पा (*Pterospermum acerifolium*) की जड़ों पर मैंने इन्हें देखा है। क्या किसी फल अथवा कन्द पर आपने कभी लेंटीसेल देखे हैं? कहीं भी हों ये, इनका काम है जीवित कोशिकाओं तक ज़रूरी ऑक्सीजन पहुँचाना।

स्टोमेटा बनाम लेंटीसेल

स्टोमेटा पत्तियों पर पाए जाते हैं। वे दिन-रात में खुलते-बन्द होते हैं अर्थात् उनसे होने वाला गैसीय आदान-प्रदान पत्तियों के नियंत्रण में रहता है। वहीं लेंटीसेल तनों, जड़ों और फलों की बाहरी सतह पर पाए जाते हैं। ये हमेशा खुले रहते हैं। अर्थात् इनसे होने वाला गैसीय आदान-प्रदान नियंत्रण-मुक्त होता है। इन गैसों में कार्बन डायऑक्साइड एवं ऑक्सीजन पौधों के लिए महत्वपूर्ण होती हैं।

दरअसल जो मोटे, सूखे, खुरदरे, काले-भूरे तने हमें बाहर से बेजान-सी चीज़ लगते हैं वे अन्दर से जीवित होते हैं। सूखी काली छाल के नीचे उपस्थित जीवित कोशिकाओं को साँस लेने के लिए ऑक्सीजन चाहिए, वातावरण की ऑक्सीजन-युक्त हवा इन्हीं लेंटीसेल के ज़रिए अन्दर प्रवेश करती है।

लेंटीसेल छाल में पाए जाने वाले छिद्र हैं जिन्हें वात-रन्ध्र भी कहा जाता है। ये अक्सर उसी स्थान पर बनते हैं जहाँ पहले युवा हरे तने पर स्टोमेटा पाए जाते थे। ये तने में द्वितियक वृद्धि के बाद बनते हैं। चूँकि इस दौरान बनीं कॉर्क ऊतक अन्तराकोशीय अवकाश-विहीन होती हैं। साथ ही इनमें सुबेरिन (बॉक्स-1) जमा होता है, जिस कारण ये पानी और गैसों, दोनों के लिए अपारगम्य होती है।

बॉक्स 1 - सुबेरिन

बोतल के ढक्कनों में लगने वाला कॉर्क इसी कॉर्क-केम्बियम की क्रिया-शीलता का परिणाम है। इस कॉर्क में भी आप आड़ी धारियों के रूप में लेंटीसेल देख सकते हैं। चूँकि कॉर्क कोशिकाएँ पास-पास एकदम सटी हुई होती हैं और इनमें सुबेरिन नाम का पदार्थ भरा होता है जो इसे पानी और गैसों के लिए अपारगम्य बना देता है, इसी कारण बोतलों में इसे ढक्कन के रूप में इस्तेमाल किया जाता था। इस कॉर्क पर अम्ल का भी कोई असर नहीं होता। अतः यह एक अच्छा ढक्कन सिद्ध हुआ।

इसी कारण कॉर्क के नीचे स्थित जीवित कोशिकाओं को ताज़ी हवा खिलाने के लिए लेंटीसेल निर्माण होता है। एक तरह से ये मोटे, पुराने तने के स्टोमेटा ही हैं, पर यहाँ गार्ड सेल नहीं हैं अतः हवा के आने-जाने पर कोई रोक-टोक नहीं है।

लेंटीसेल अक्सर लेंस के आकार के होते हैं। यही इनके नामकरण का आधार भी है। ये तनों पर आड़े भूरे-भूरे खुरदरे उभारों की तरह दिखाई देते हैं। कभी-कभी ये खड़ी धारियों के रूप में भी दिखते हैं। पत्ती और युवा हरे तनों पर स्टोमेटा को तो हम बिना सूक्ष्मदर्शी की सहायता से नहीं देख सकते परन्तु इन लेंटीसेल को बड़े आराम से नग्न आँखों से देखा जा सकता है (चित्र-2)।

बनते कैसे हैं?

लेंटीसेल एक द्वितियक रचना है जो कॉर्क-केम्बियम की सक्रियता के कारण बनती है। इनके निर्माण के समय कॉर्क-केम्बियम बाहर की ओर यानी एपिडर्मिस की तरफ कॉर्क कोशिकाएँ न बनाकर, कुछ स्थानों पर पतली भित्ति वाली पेरेनकायमा कोशिकाएँ बनाता है (चित्र-3)। इन्हें पूरक कोशिकाएँ कहते हैं। इन पूरक कोशिकाओं के निर्माण से एपिडर्मिस पर दबाव पड़ता है और वे वहाँ से फट जाती है। इस तरह लेंटीसेल बन जाता है। इन पूरक कोशिकाओं, जो कॉर्क-केम्बियम के दोनों तरफ बनती हैं, के बीच बहुत सारे (अन्तराकोशीय) अवकाश होते हैं। अतः लेंटीसेल के माध्यम से तने की भीतरी जीवित कोशिकाओं का सम्बन्ध बाहरी पर्यावरण से बना रहता है।

फिर लौट आते हैं परिभ्रमण पर। सप्तपर्णी के पेड़ पर लेंटीसेल देख मेरे साथ चल रहे साथी प्रशिक्षणार्थी प्राध्यापकों से मैंने जब पूछा कि आपने क्या लेंटीसेल देखे हैं तो जवाब आया – देखे नहीं उनके बारे में पढ़ा ज़रूर है। मैंने उनसे कहा कि ये देखिए

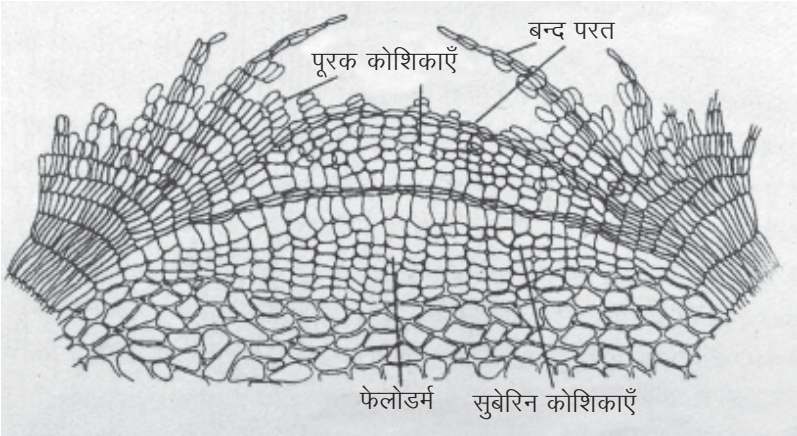

चित्र-3: लेंटीसेल की अनुप्रस्थ काट। कॉर्क-केम्बियम द्वारा अन्दर की तरफ बनाई जाने वाली पेरेनकायमा की परत को फेलोडर्म कहते हैं।

आपके सामने हज़ारों की संख्या में लेंटीसेल अपना मुँह खोले मुस्कुरा रहे हैं। शायद आपको देखकर हँस भी रहे हों।

इतनी बड़ी संख्या में और इतने स्पष्ट लेंटीसेल देखकर उन्हें बड़ा आश्चर्य हुआ। उनकी खुशी उनके चेहरे पर साफ नज़र आ रही थी। फिर तो वे खुद ही बताने लगे, "अरे, इस भिण्डी ट्री पर भी दिख रहे हैं। और गुलमोहर (*Delonix regia*) पर भी हैं ढेर सारे।" उनकी इस सूची में सुबबूल (*Leucaena leucocephala*) और चिरोल (*Holoptelea integrifolia*) के पेड़ भी जल्द ही जुड़ गए।

इस तरह वनस्पति विविधता के अलावा परिभ्रमण के दौरान हमने कुछ ऐसी चीज़ों के बारे में जानकारी प्राप्त की जिनके बारे में हममें से ज़्यादातर ने किताबों में ही पढ़ा था।

किशोर पंवार: होल्कर साइंस कॉलेज, इन्दौर में बीज तकनीकी विभाग के विभागाध्यक्ष और वनस्पतिशास्त्र के प्राध्यापक हैं। विज्ञान शिक्षण व लेखन में रुचि।
लेख में इस्तेमाल किए गए फोटो किशोर पंवार द्वारा मोबाइल कैमरे से खींचे गए हैं।